Impact Factor (SJIF): 6.092 E-ISSN: 2583-1615

International Journal of Research in Academic World

Received: 01/August/2023 IJRAW: 2023; 2(9):154-156 Accepted: 05/September/2023

कजरी में कथक का भाव प्रणयन

*[1]डॉ. जितेश गढ़पायले

*[1]सहायक प्राध्यापक, कत्थक नृत्य विभाग, इन्दिरा कला संगीत विश्वविद्यालय, खैरागढ़, छत्तीसगढ, भारत।

सारांश

शास्त्रीय नृत्य का उद्देश्य भावनाओं के उत्कर्ष द्वारा रसानुभूति कराना है। स्वर, ताल, लय– मन और मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव छोड़ते है इसलिये संगीत को श्रेष्ठ कलाओं में गिना जाता है। कजली गीतों में वर्षा ऋतु का विरह वर्णन तथा राधा–कृष्ण की लीलाओं का वर्णन अधिकतर मिलता है। रसभरे लोकगीतों में कजरी का महत्वपूर्ण स्थान है। कजरी मूलतः लोकनारी का पावसकालीन आभरण है। पावस ने हर युग में चेतन, अचेतन सम्पूर्ण प्राणियों पर अपना असर छोड़ा है। यही कारण है कि इसे अनन्त काल से साहित्य और संगीत में महत्वपूर्ण स्थान मिलता रहा है। पावस की महत्ता मात्र इसके सौन्दर्य को लेकर नहीं बल्कि उस लक्ष्य के लिए भी है जिससे खेतों प्राणी में हरियाली आती है, धरती पर अन्न पैदा होता है और उसी अन्त से प्राणली मात्र का भरण–पोषण होता है। मल्हार वर्षा के मेघों को देखकर किसान प्रसन्नता से झूम उठते हैं और वर्षा की प्रतीक्षा करने लगते हैं। खेत–खेत में, गलियों–चौबारों में सुरीले कण्ठो में उतर आते हैं भारतीय परम्परा में नर्तन क्रिया के तीनों भेदों में से नाट्य को रसाश्रित, नृत्त को ताल लय के आश्रित और नृत्य को भावाश्रित माना गया है। कजरी एक विशेष प्रकार की गीत शैली है जो अपनी प्रकृति से भाव प्रवण तथा सरस है। इसलिए उसे नृत्य का आधार बनाया गया है। जिसमें अभिव्यक्ति की कैशिकी और सात्वत्ति वृत्ति दृष्टिगोचर होती है। कजरी में हिन्दी साहित्य के भक्ति काव्य और रीति को एक साथ घुलता मिलता देख सकते हैं। श्रृंगार के साथ ही करूण व शांत रस का भी सुन्दर परिपाक इनमें हुआ है और इन्हीं विशेषताओं के कारण ये कथक नृत्य में प्रमुख आधार के रूप में विकसित हुई है। कजरी के गीतों में भाव प्रदर्शन अधिक सहज स्वाभाविक और सात्विक अभिनय प्रधान होगी जो शास्त्रीय शब्दावली में लोकधर्मी तत्व की प्रधानता है। ऐसा होना स्वाभाविक भी है। शब्द भेद अभिधा लक्षणा और व्यंजना के आधार पर भी कजरी अपने आप में समृद्ध है।

मुख्य शब्दः रस के अनुकूल भाव प्रणयन

प्रस्तावना

विभिन्न प्रांतों में प्रादेशिक संस्कृति की आवश्यकता के अनुसार भिन्न–भिन्न अवसरों पर जो गीत गाये जाते है उसे लोकसंगीत कहा गया है।

संस्कृति का उद्देश्य भावनाओं के उत्कर्ष द्वारा रसानुभूति कराना है। यह रसानुभूति क्रिकेट के खेल में तन्मय होने अथवा नृत्य गीत आदि में एकाग्र होने से भी होती है। स्वर, ताल, लय, मन और मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव छोड़ते है इसलिये संगीत को श्रेष्ठ कलाओं में गिना जाता है।

कजलीः कजली गीतों में वर्षा ऋतु का विरह वर्णन तथा राधा–कृष्ण की लीलाओं का वर्णन अधिकतर मिलता है। कजली की प्रकृति क्षुद्र है इसमें श्रृंगार रस प्रधान है। बनारस में कजली गाने का प्रचार अधिक पाया जाता है।

कजरी का परिचय

उत्तर प्रदशे एवं बिहार के रसभरे लोकगीतों में कजरी का महत्वपूर्ण स्थान है। कजरी मूलतः लोकनारी का पावसकालीन आभरण है। जिस तरह बसन्त के आते ही लोक हृदय फाग रंगों में सराबोर हो उठता है उसी प्रकार सावन के आते ही आकाश पर काले कजरारे सघन मेघों,

*Corresponding Author: डॉ. जितेश गढ़पायले

चमकती बिजुरिया और रिमझिम बरसते पानी के बीच कजरी गीतों के बोल लोक हृदय को आलोड़ित कर देते हैं। झूलों पर झूलती ग्रामीण युवतियों की मधुर स्वर–लहरी वातावरण को मादक बना देती है और सारे वातावरण में कजरी के गीत जड़ती पेंगों के साथ तैरने लगते हैं।

पावस ने हर युग में चेतन, अचेतन सम्पूर्ण प्राणियों पर अपना असर छोड़ा है। यही कारण है कि इसे अनन्त काल से साहित्य और संगीत में महत्वपूर्ण स्थान मिलता रहा है। 'कालीदास का पावस जल की फुहारों से भरा हुआ, मेघ गर्जन की मृदंग ध्वनि करता हुआ धरती पर राजसी ठाट–बाट से उतरता है। [1] और उघर आदि कवि वाल्मिकी के नील कमलदल सरीखे काले मेघ दसों दिशाओं का श्याम बनाकर शिथिल पड़े गये हैं। [2] महाकवि माघ को इन्द्रधनुष युक्त मेघ ऐसे लगते हैं जैसे मणियुक्त कुण्डल से कान्तिमान भगवान वामन। [3] भारवि के मेघों को दम्पत्तियों के प्रेम कलह को दूर करने का माध्यम बनाया है। [4] गाथा सप्तशती के कवि के शब्दों में वर्षा लक्ष्मी के पयोधर मेघ दर्शन से उत्तेजित हो विन्ध पर्वत के नवष्टणांकुर के रूप में रोमांच द्वारा प्रसाधित अंगों को धारण कर रहे हैं। [5]

पावस की महत्ता मात्र इसके सौन्दर्य को लेकर नहीं बल्कि उस लक्ष्य के लिए भी है जिससे खेतों प्राणी में हरियाली आती है, धरती पर अन्न पैदा होता है और उसी अन्त से प्राणली मात्र का भरण–पोषण होता है। यजुर्वेद के एक सुक्त में अन्नत मंगल कामनाओं के अन्तर्गत वर्षा ऋतु का आह्वान किया गया है–'समय–समय पर पर्जन्य हमें वर्षा दान करें।' पर्जन्य शब्द इन्द्र और मेघ दोनों के लिए प्रयुक्त होता है। वर्षा के भौगोलिक प्रभाव के कारण ही इस देश के लोकगीतों में वर्षा ऋतु के प्रति प्रीतिपूर्ण भावों का उदय हुआ है। बादलों का प्रतीक बनकर मानों मेघ उमड़ता है ऐसी कल्पना युग–युग से होती रही है।

मल्हार वर्षा के मेघों को देखकर किसान प्रसन्नता से झूम उठते हैं और वर्षा की प्रतीक्षा करने लगते हैं। खेत–खेत में, गलियों–चौबारों में सुरीले कण्ठो में उतर आते हैं मल्हार और कजरी के भावमीन स्वर बगीचे में झूला झूलती हुई युवतियों रिमझिम बुंदों का आनन्द लेती हुई गा उठती हैं –

सावन का महीना मेहा रिमझिम बरसे
ठंडी ठंडी बियार बादल बरसे फुहारें
ऐसे में होते सखी पिया जी हमारे

कजरी में कथक का भाव प्रणयन

भारतीय परम्परा में नर्तन क्रिया के तीनों भेदों में से नाट्य को रसाश्रित, नृत्त को ताल लय के आश्रित और नृत्य को भावाश्रित माना गया है। जैसा कि आचार्य धनंजय ने दशरूपक (1/7–9) में लिखा है –

अवस्थानुकृतिर्नाट्यं..... दशधैव रसाश्रयम् ।
अन्यद भावाश्रयं नृत्यं नृत्तं तालालयाश्रयम् ।।

इस मान्यता के अनुसार नृत्य का मुख्य कार्य भावों का प्रदर्शन है।

कजरी एक विशेष प्रकार की गीत शैली है जो अपनी प्रकृति से भाव प्रवण तथा सरस है। इसलिए उसे नृत्य का आधार बनाया गया है। जिसमें अभिव्यक्ति की कैशिकी और सात्वत्ति वृत्ति दृष्टिगोचर होती है जिसे आधुनिक शब्दों में ब्सेंपबंस और त्वउंदजपब कहा जा सकता है। कैशिकी वृत्ति रूमानी शैली की गायकी है। कजरी में नायिका भेद की विभिन्न छवियाँ भी देखने को मिलती हैं जो कि कजरी के माध्यम से साकार हो उठती है जैसे खण्डिता नायिका, वासक सज्जा नायिका, प्रोणित पतिका नायिका लगभग सभी प्रकार की नायिकाओं के उदाहरण कजरी में ढूँढ़े जा सकते हैं। कजरी में हिन्दी साहित्य के भक्ति काव्य और रीति को एक साथ घुलता मिलता देख सकते हैं। श्रृंगार के साथ ही करूण व शांत रस का भी सुन्दर परिपाक इनमें हुआ है और इन्हीं विशेषताओं के कारण ये कथक नृत्य में प्रमुख आधार के रूप में विकसित हुई है। जिस तरह कथक नृत्य के भाव प्रदर्शन की सात विधियाँ प्रचलित हैं उसे उसी तरह कजरी के माध्यम से भी किया जा सकता है, जैसे नयन भाव, बोल भाव, अर्थ भाव, सभा भाव, नृत्य भाव, अर्थभाव और अंग भाव आदि। कजरी के गीतों में भाव प्रदर्शन अधिक सहज स्वाभाविक और सात्विक अभिनय प्रधान होगी जो शास्त्रीय शब्दावली में लोकधर्मी तत्व की प्रधानता है। ऐसा होना स्वाभाविक भी है। शब्द भेद अभिधा लक्षणा और व्यंजना के आधार पर भी कजरी अपने आप में समृद्ध है।

इस प्रकार यह निश्चित है कि जिस तरह कथक शैली का भाव प्रणयन मूलतः लोक जीवन की स्वाभाविक गतिविधियों पर आधारित है जो कि कजरी के गीतों में भी देखने को मिलता है। ऊपर वर्णित समस्त भाव के आधार पर कजरी के शास्त्र सीमा में रहते हुए भी भाव प्रणयन के क्षेत्र में नित–नव प्रयोग किये जा सकते हैं जिससे कि कथक में कजरी का भाव सौन्दर्य सबसे विरल और सहज आकर्षण बन सके।

निष्कर्ष

भारतीय शास्त्रीय नृत्य की परम्परा में बेहद लोकप्रिय नृत्य; कथक नृत्य विशेष रूप से स्थापित है। इस नृत्य का सुरूचिपूर्ण प्रदर्शन अतीत के उस पार ले जाता है जहाँ स्मृतियाँ फिर से जुड़ने लगती है। शास्त्रीय नृत्य की गौरवशाली परम्परा के अनुसार आज भी कथक नृत्य के भाव प्रदर्शन में भाषा की मर्यादा और प्रस्तुति की गरिमा का विशेष ध्यान रखा जाता है। भाव प्रदर्शन के विविध प्रकारों में प्रदर्शन की प्रस्तुति आज भी विशेषरूप से गुरूजनों के माध्यम से सुरक्षित है। शास्त्रीय नृत्यों में बेहद लोकप्रिय कथक नृत्य का शुमार विश्व के अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रसारण होता है फलस्वरूप कथक नृत्य में भाव प्रणयन की कल्पना को साकार करने में लखनऊ घराने के नृत्य गुरु स्व.पं. शुम्भु महाराज, स्व.पं.

गुरु लच्छु महाराज एवं स्व.पं. बिरजु महाराज आदि उल्लेखनीय है। भाव प्रणयन का शुरुवाती स्वरूप बैठकी भाव था और यही से नृत्य गुरुओं द्वारा भाव बताने की परम्परा का विकास हुआ जिससे शास्त्रीय नृत्य में भाव बताना कहा जाता है। कला एवं साहित्य मनीषि स्व.पं. बिंदादीन महाराज ने भाव प्रदर्शन में भाव प्रणयन के योग्य अनेक साहित्य की रचना का निर्माण कर भाव बताने की विधा को समृद्ध किया। कथक नृत्य में भाव प्रदर्शन की आवश्यकता क्यों पड़ी इस प्रश्न के उत्तर में कथक नृत्य के गुरुओं का मत है कि कथक नृत्य के प्रदर्शन में प्रस्तुति क्रम होता है जो कि पूर्व निर्धारित एवं नियोजित होता है। प्रदर्शन के दौरान अनेक ऐसे दर्शक जो निष्णांत एवं बृद्धिजीवी ज्यादातर अधिक संख्या में कथक नृत्य के जानकार एवं अखिल भारतीय स्तर के दर्शक थे। जिनकी आवश्यकता थी कि प्रदर्शन में विविधता और साहित्य भी होना चाहिए तो इन दो आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कथक शास्त्रीय नृत्य को ही उपयुक्त पाया गया और इस प्रकार शास्त्रीय कथक नृत्य की विधा में भाव प्रणयन का प्रारंभ हुआ। नृत्य प्रदर्शन में साहित्य को भाव प्रदर्शन हेतु अनुकूल बनाने के लिए विभिन्न गायन शैलियों को सुरीले धुन में प्रस्तुत करने का कार्य गायन संगतकारों द्वारा इस दायित्त्व को निभाया जाता है। साहित्य का आधार लेते हुए इस नृत्य विधा में सभी प्रकार के शास्त्रीय, उपशास्त्रीय एवं लोक गायन की शैली का समावेश कर भाव प्रदर्शन के माध्यम से इस नृत्य शैली की गरिमा को पूर्ण रूप से स्थापित करने का श्रेय नृत्य के महान गुरुओं को ही जाता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सुचि

1. ऋतु संहार, कालीदास सर्ग 2
2. वाल्मिकी रामायण, किष्किन्धा कान्ड, 20/9/10
3. शिशुपाल वध, 6/27
4. किरातार्जुनीयम, 10/19
5. गाथा सप्तशती, श्लोक 80